प्रो. नरेश मिश्र

: 1 जनवरी, 1951, महमूदपुर, सुलतानपुर (उ.प्र.)

: एम.ए. (हिंदी-संस्कृत) पीएच.डी., पत्रकारिता डिप्लोमा, पोस्ट एम.ए. भाषाविज्ञान (हिंदी) डिप्लोमा, साहित्य महोपाध्याय।

। अनुभव : 40 वर्ष

क अनुभव : अध्यक्ष, हिंदी विभाग, हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, महेंद्रगढ़ (हरियाणा); ललित कला विभाग; डीन, मानविकी, परफार्मिंग एंड विजुअल आर्ट्स फैकल्टि

पुरस्कार : राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय सम्मान, हिंदी-संस्कृत पुस्तकें पुरस्कृत, शोध-आलेख, कहानी, लघुकथा पुरस्कृत।

।-पुस्तकें

- ी लिपि और उसकी समस्याएँ
- शब्द समूह का विकास
- ायुक्त हिंदी भाषा-चिंतन (पुरस्कृत)
- ' और हिंदी भाषा का इतिहास
- ानमूलक हिंदी और भाषांग
- विज्ञान और हिंदी भाषा
- रेश त्रिपाठी का शब्द भंडार
- विज्ञान और मानक हिंदी
- ' बाहर तक (कहानी-संग्रह)
- काव्य : संवेदना के शिखर : आधुनिक संदर्भ
- ासीयनाटकेपु सामाजिक जीवनम् (पुरस्कृत)
- मिश्र रचनावली (11 खंड)
- भाषा और लिपि
- भाषा और भाषा विज्ञान
- भाषाविज्ञान और हिंदी
- प्रयोजनमूलक हिंदी
- नागरी लिपि
- मीडिया लेखन
- अलंकार दर्पण
- प्रकाश पर्व (लघुकथा-संग्रह)
- हिंदी काव्य : संवेदना के शिखर : भक्तिकालीन संदर्भ
- भक्तिकालीन हिंदी काव्य : वैचारिक पृष्ठभूमि
- शिवरात्रि से कार्निवाल तक (यात्रा-वृत्तान्त)
- हिंदी भाषा और साहित्य

60, सेक्टर-1, रोहतक (हरियाणा) 124001, फो. 09254392225 मो. 09896295552

nareshmishra@yahoo.co.in

₹ 900/-

ISBN 978-93-88107-54-0

जय प्रकाशन
प्रकाशक एवं वितरक
, 209 जे.एम.डी. हाऊस अंसारी रोड,
रियागंज, नई दिल्ली-110002
608, 41564415,9313438740,

भक्तिकालीन काव्य की प्रासंगिकता • डॉ. नरेश मिश्र

383

भक्तिकालीन काव्य की प्रासंगिकता

डॉ. नरेश मिश्र

भक्तिकालीन काव्य की
प्रासंगिकता

नरेश मिश्र

३४५

संजय प्रकाशन
नई दिल्ली (भारत)

संजय प्रकाशन
4378/4 डी-209, जे.एम.डी. हाऊस
अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
दूरभाष : 23245808, 41564415
मो. : 9313438740
E-mail : sanjayprakashan@yahoo.in

© डॉ. नरेश मिश्र

ISBN 978-93-88107-54-9

प्रथम संस्करण : 2019

मूल्य : ₹ 900.00

शब्द संयोजन :
हर्ष कंप्यूटर्स
दिल्ली-110086

मुद्रक :
रोशन ऑफसेट प्रिंटर्स
दिल्ली-110053

प्राक्कथन

हिंदी साहित्य के मध्यकाल को पूर्व मध्यकाल और उत्तर मध्यकाल दो भागों में विभक्त किया गया है। पूर्व मध्यकाल को 'भक्तिकाल' नाम से अभिहित किया जाता है। इस नामकरण से स्पष्ट है कि इस काल में भक्ति भाव समन्वित रचनाओं का सृजन प्रमुखता से हुआ है। सृजन की विस्तृत समय सीमा और तत्कालीन विषम परिस्थितियों से मुक्ति पाने के लिए दिए गए उद्‌बोधन के साथ आनंदानुभूति के लिए श्रद्धा-भक्ति भाव-समन्वित करने के आधार पर भक्तिकाल को स्वर्णयुग की संज्ञा दी गई है।

भक्तिकालीन हिंदी काव्य की निर्गुण और सगुण धाराओं में व्यष्टि से लेकर समष्टि तक के उन्नयन का अनुप्रेरक उद्‌बोधन मिलता है। निर्गुण संत कवियों ने समरसता लाने के लिए एकेश्वरवाद को अपनाकर निर्गुण-निराकार ईश्वर की उपासना का मार्ग प्रशस्त किया। वे धार्मिक और दार्शनिक भेदभाव समाप्त करने के अभिलाषी थे। सामाजिक रूढ़ियों, अंधविश्वास और बाह्याडंबर का मुखर स्वर में विरोध किया। आज भी धार्मिक कट्टरता, अंधविश्वास, अनाचार और मानसिक संकीर्णता जन-मन को घायल कर रही है। वर्तमान समय में संत काव्य के नैतिक उन्नयन, चरित्र-निर्माण करनेवाले दर्शन, धर्म और भक्ति की आवश्यकता है।

संत कवियों की तरह निर्भीक, साहसी, सत्यनिष्ठ बनने के लिए उनके ही समान सर्वशक्तिमान ईश्वर पर श्रद्धा और भक्ति भाव रखने की आवश्यकता है। आज विषाक्त परिवेश में गुरु नहीं सतगुरु की गुरुता की छाया में दृढ़ निश्चय के साथ सतत गतिशील रहने की अपेक्षा है। निश्चय ही कबीराना साध वर्तमान विषम परिवेश को पार करने की शक्ति प्रदान कर सकता है।

निर्गुण संतकाव्य की दूसरी धारा है–'प्रेमाख्यान काव्य'। इस धारा के सूफी कवियों का काव्य हिंदू-मुस्लिम संस्कृतियों के समन्वय की प्रेरक भूमिका में सामने

अनुक्रम

प्राक्कथन v

1. हिंदी भक्तिकाव्य की प्रासंगिकता–प्रो. जय प्रकाश 11
2. परवर्ती मध्यकाल के इतिहास का पुनर्लेखन अपेक्षित –प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित 32
3. भक्तिकालीन मूल्य-व्यवस्था और संत काव्य–प्रो. नरेश मिश्र 41
4. निर्गुण संत काव्य : व्यष्टि से समष्टि तक का भावोत्कर्ष उद्‌बोधन–प्रो. नरेश मिश्र 48
5. कबीरदास की प्रासंगिकता–डॉ. उन्मेष मिश्र 62
6. कबीरदास के आराध्य : सर्वव्यापी ब्रह्म–प्रो. नरेश मिश्र 74
7. 'सफलता का परमाधार गुरु-सान्निध्य'–कबीरदास –स्नेह मिश्रा 91
8. संत रविदास का सामाजिक-सांस्कृतिक–दिशाबोध –डॉ. विकास कुमार 99
9. समाज सुधारक संत रविदास–डॉ. अर्चना आर्य 112
10. 'सर्वे भवन्तु सुखिनः'–गुरु नानकदेव–डॉ. कमलेश 121
11. समाज के दिशाबोधक संत दादूदयाल–डॉ. नवीन नंदवाना 126
12. संत दादूदयाल का अध्यात्म आधारित जीवन-दर्शन –डॉ. कृष्णा हुड्डा 140
13. जायसी का अलौकिकोन्मुखी प्रेम–डॉ. सावित्री मिश्र 145
14. तुलसी-साहित्य में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के बीज –डॉ. पूरनचंद टंडन 155

15. वर्तमान संदर्भ में तुलसी-काव्य की प्रासंगिकता
–डॉ. विजय कुमार वेदालंकार 171
16. तुलसीदास की सामाजिक समरसता–प्रो. नरेश मिश्र 181
17. लोकमंगलाभिलाषी भक्तशिरोमणि तुलसीदास
–प्रो. नरेश मिश्र 190
18. तुलसी के मानस की भाषा की सहज संप्रेषणीयता
–प्रो. नरेश मिश्र 202
19. सूरदास की मधुरभक्ति में मानवतावादी दृष्टि
–प्रो. नरेश मिश्र 212
20. सूर के वात्सल्य में माधुर्य का चरम उत्कर्ष
–डॉ. विकास कुमार 223
21. सूरदास की काव्य भाषा और मधुर अभिव्यक्ति
–प्रो. नरेश मिश्र 230
22. नंददास का रससिक्त सांस्कृतिक चित्रण
–प्रो. नरेश मिश्र 246
23. मीरां काव्य में भक्ति एवं समाजोन्नयन का भाव
–डॉ. अरविंद सिंह तेजावत 258
24. नैतिकता के दिव्य उद्बोधक रहीम
–प्रो. नरेश मिश्र 265
25. रहीम का काव्य : अनुप्रेरक प्रेम और भक्ति
–प्रो. नरेश मिश्र 281
26. रसखान के काव्य में भक्तिपूर्ण प्रेम का स्वरूप
–डॉ. अनिलेश बोकन 293

लेखकों का परिचय 303

हिंदी भक्तिकाव्य की प्रासंगिकता

–प्रो. जय प्रकाश

प्रासंगिकता की अवधारणा उपयोगितावादी सोच को दर्शाती है। इसकी केंद्रीय आर्थी इकाई 'संग' है, जो 'आसक्ति' की वाचक है। यह 'संलग्नता' या 'जुड़ाव' को व्यक्त करती है। मनुष्य-जाति को स्वभाव स्वार्थ-खोजी या स्वहित-चिंतक होता है। मैथिलीशरण गुप्त जी ने 'साकेत' के एक गीत में मानव-मन की इसी स्वार्थी प्रवृत्ति को लक्षित करते हुए कहा था–

"जगती वणिक वृत्ति है रखती
उसे चाहती चित्तको चखती
स्वादु नहीं परिणाम निरखती,
हमें यही खलता है।"

यहाँ 'खलना' क्रिया आदर्श-संकेती है, शेष स्वार्थ-वृत्ति की गाथा है, जो यथार्थमयी है। 'प्रसंग' और 'प्रासंगिकता' जैसे शब्दों की निष्पत्ति में उस चिंतन की अनुगूँज है, जो स्वार्थपरता से जुड़ी हुई है। इस उपयोगितावादी दृष्टि के कारण साहित्य का कभी-कभी बहुत अहित हुआ है। स्वार्थ तात्कालिक हुआ करता है। अतएव उपयोगितावादी मूल्यांकन-दृष्टि भी तात्कालिक हित से जुड़ी रहती है। तात्कालिक हानि-लाभ के समाप्त होते ही यह दृष्टि भोथरी हो जाती है। यह रचनाओं के उस परिपार्श्व तक नहीं पहुँच पाती, जो रचनाओं को काल का अतिक्रमण का कारण बनाता है। यह उपयोगितावादी दृष्टि की संकोचशीलता ही थी, जो आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जैसे आचार्य के द्वारा कालिदास जैसे महान् कवि का महत्त्वांकन कम करवा रही थी और 'मेघदूत' जैसी कालजयी रचना को द्वितीय श्रेणी का काव्य घोषित करवा रही थी। कहने का अभिप्राय